कुंभलगढ़ किला

वास्तुकला, वीरता और प्राकृतिक सौंदर्य का संगम

यूनेस्को ने घोषित कर रखा है विश्व धरोहर

यह किला यूनेस्को विश्व धरोहर की सूची में शामिल है। 2013 में यूनेस्को विश्व धरोहर स्थल चुना गया था। अपनी कई सारी खूबियों और शानदान इतिहास की वजह से ही इसे विश्व धरोहरों की सूची में स्थान मिला। शाम के पर्यटक लाइट एंड साउंड शो का लुत्फ उठाते हैं।

राजस्थान समृद्ध इतिहास और संस्कृति के लिए पूरी दुनिया में जाना जाता है। यहां की ऐतिहासिक धरोहरों को देखने के लिए भारत ही नहीं दुनियाभर से पर्यटक आते हैं। यह राज्य अपने खानपान और कल्चर के लिए प्रसिद्ध है। यहां के राजसमंद जिले में बसा कुंभलगढ़ किला सिर्फ एक किला नहीं, बल्कि वास्तुकला, वीरता और प्राकृतिक सौंदर्य का संगम है। यह किला एक बेहद खूबसूरत और लोकप्रिय पर्यटन स्थल है। यह किला राजस्थान प्रांत के गौरव, अदम्य साहस और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के प्रतीक के रूप में जाना जाता है। यहां का वैभव देखते ही बनता है। यहां आने वाले पर्यटक अपने साथ यहां की यादें और कहानियां व इतिहास का एक टुकड़ा लेकर लौटते हैं। हर साल यहां ढाई से तीन लाख सैलानी घूमने आते हैं। कुंभलगढ़ किला इतिहास के पन्नों में राणा कुंभा की आन-बान-शान का प्रतीक है। कुंभलगढ़ की सर्दियों और उत्सवों का प्रत्यक्ष प्रमाण है। किले के चारों ओर 36 किमी लंबी दीवार है, जिसे ग्रेट वॉल ऑफ इंडिया कहा जाता है।

अभेद्य किले के रूप में पहचान

- इस किले की गिनती देश के सबसे अभेद्य किलों में होती है। इसे मेवाड़ किले के नाम से भी जाना-पहचाना जाता है। यह ऐतिहासिक किला महाराणा प्रताप का जन्मस्थान भी है। दुश्मन इसे कभी जीत न सके इसलिए इसके निर्माण के समय सुरक्षा के हर पहलू पर ध्यान रखा गया। इसके सात द्वार, 13 पर्वत चोटियां, वॉच टावर सदैव आक्रमणकारियों के लिए चुनौती रहे हैं।

सर्दियों में होती ज्यादा भीड़

- अक्टूबर, नवंबर व दिसंबर में विदेशी पर्यटकों की ज्यादा भीड़ होती है। किले में आयोजित होने वाले मेले, उत्सव और सर्दी के मौसम में जंगल सफारी में जानवरों की मस्ती देखने का मजा ही अलग होता है। यह किला पर्यटकों की शेरगाह का प्रमुख स्थान है। किला मेवाड़ की आन-बान-शान का प्रतीक है। 15 वीं शताब्दी में मेवाड़ शासक महाराणा कुंभा ने इसका निर्माण कराया था। किले के चारों ओर करीब 36 किलोमीटर लंबी दीवार है। इसे 'ग्रेट वॉल ऑफ इंडिया' भी कहते हैं। इस दीवार की विशालता चीन की ग्रेट वॉल के बाद दुनिया में दूसरा स्थान रखती है। किले से दिखने वाला हरा-भरा अरावली का विस्तार और जंगल सफारी लोगों में रोमांच भर देती है। यही वजह है कि यह किला लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता है। यह किला जितना शानदार है, उतना ही शानदार इसका इतिहास उत्कृष्ट है।

किले में सात दरवाजे हैं

- इस किले में प्रवेश के लिए सात गढ़वाले प्रवेश द्वार हैं। इनके नाम अरेट पोल, हनुमान पोल, राम पोल, विजय पोल, निंबू पोल, पाघरा पोल और टॉप खाना पोल है। किले में ही बादल महल भी है, जोकि किले के सबसे ऊंचाई वाले स्थान पर स्थित है। महल के आसपास बादलों का मनोहारी दृश्य दिखता है। इस वजह से इसे बादल महल भी कहते हैं। किला परिसर में 360 से अधिक मंदिर स्थापित हैं, जिनमें से 300 जैन मंदिर हैं और बाकी हिंदू हैं। इन मंदिरों में शिव मंदिर, वेदी मंदिर, नीलकंठ महादेव मंदिर मम्मदेव मंदिर, लक्ष्मी नारायण भगवान का मंदिर प्रसिद्ध है। किले की वास्तुकला, ऊंची पहाड़ियां, हरियाली, घना जंगल यहां आने वाले पर्यटकों को मंत्रमुग्ध कर देती है। पर्यटक यहां किले के साथ ही यहां के हस्तशिल्प, पारंपरिक भोजन, लोककला और आदिवासी संस्कृति के भी कायल हैं। यही वजह है कि कुंभलगढ़ सिर्फ किले तक सीमित न रहकर सांस्कृतिक पर्यटन स्थल के रूप में भी विश्व मानचित्र पर उभर चुका है।

डॉ. विकास शुक्ला
वरिष्ठ न्यूरो एवं स्पाइन सर्जन

नौ देवी और आज की नारी

नवरात्रि के दौरान पूजी जाने वाली नौ देवी आज की नारी के विभिन्न रूपों और गुणों का प्रतीक हैं। ये नौ देवी हैं - शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चंद्रघंटा, कूष्मांडा, स्कंदमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिदात्री

नौ देवी और नारी के रूप

- **शैलपुत्री :** नारी के बचपन का प्रतीक।
- **ब्रह्मचारिणी :** नारी की तपस्या और संयम का रूप।
- **चंद्रघंटा :** नारी की सुंदरता और सुरक्षा का संदेश।
- **कूष्मांडा :** नारी की सृष्टि रचना में भूमिका।
- **स्कंदमाता :** नारी का मातृत्व का रूप।
- **कात्यायनी :** नारी की शक्ति और अन्याय के खिलाफ आवाज।
- **कालरात्रि :** नारी की शक्ति जो अन्याय का विरोध करती है।
- **महागौरी :** नारी की शांति और सौम्यता का प्रतीक।
- **सिद्धिदात्री :** नारी की सिद्धियों और आंतरिक शक्ति का प्रतीक।

आज की महिलाएं देवी रूप भी हैं

- आज की महिलाएं भी देवी के विभिन्न रूपों की तरह हैं। वे अपने जीवन में शक्ति, साहस, ममता और बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन करती हैं। चाहे वह घर हो, कार्यस्थल हो या समाज, महिलाएं अपनी भूमिका को निभाते हुए देवी के गुणों को दर्शाती हैं।
- **शक्ति और साहस :** महिलाएं अपने जीवन में चुनौतियों का सामना करती हैं और उन्हें पार करती हैं।
- **ममता और करुणा :** महिलाएं अपने परिवार और समाज के प्रति ममता और करुणा दिखाती हैं।
- **बुद्धिमता और नेतृत्व :** महिलाएं अपने निर्णयों और कार्यों में बुद्धिमता और नेतृत्व का प्रदर्शन करती हैं।

देवी और नारी - एक समान

- देवी और नारी में समानता है, दोनों ही शक्ति, करुणा और सामर्थ्य का प्रतीक हैं। जैसे देवी अपने भक्तों की रक्षा करती हैं, वैसे ही महिलाएं अपने परिवार और समाज की रक्षा करती हैं। देवी और नारी दोनों ही अपने गुणों से समाज को समृद्ध बनाती हैं। बस हर महिला में हम देवी को और देवी में अपने परिवार को देखना शुरू करें ,तब ही महिला सशक्तिकरण के सही अर्थ को साकार कर पाएंगे।

लेखिका: डॉ. निशा शर्मा

लोकरंग की बहुआयामी सौगात : गवरी

अरावली की घाटियों में बसे राजस्थान के 'भील' वनवासियों का अतीत अत्यंत गौरवशाली रहा है। एकलव्य की संतान माने जाने वाले ये भील महाराणा प्रताप की गोरिल्ला फौज के बहादुर सैनिक थे। मेवाड़ राजवंश के राज-चिन्ह में भील को 'भीलू राणा' के रूप में तीर-कमान लिए रक्षक के रूप में दिखाया गया है। अपने अंगूठे के रक्त से नए महाराजाओं के राजतिलक का विशेषाधिकार तक मिला हुआ था इन्हें। राजस्थान के इन्हीं भीलों का परंपरागत लोकनाट्य है - 'गवरी'। गवरी को लोकमानस में 'राई' के नाम से भी जाना-पहचाना जाता है। शिव और भस्मासुर की कहानी गवरी की मूल कथा मानी जाती है। गवरी में जो दृश्य अभिनित किए जाते हैं वे खेल, भाव अथवा सांग के नाम से पुकारे जाते हैं। गवरी के मूल में नृत्य की प्रधानता रही है, जो आज भी देखी जा सकती है। प्रत्येक भील परिवार का सदस्य इसमें भाग लेना अपना नैतिक व धार्मिक कर्तव्य समझता है। फलतः गवरी में कलाकारों की संख्या चालीस-पचास से लगाकर सौ से भी ज्यादा तक हो जाती है।

मुहूर्त के अनुसार प्रायः रक्षाबंधन के बाद आने वाली ठंडी राखी के दिन से ही गवरी प्रारंभ हो जाती है जो लगभग 40 दिनों तक अनवरत चलती है। प्रत्येक भीली गांव में इस समय गवरी नाचना अनिवार्य-सा है। जिस गांव में गवरी नहीं ली जाती वहां वर्षा कम ज्यादा होने, अकाल पड़ने, भयंकर भूकंप आने, आग लग जाने, चोरी-डाका पड़ने एवं हरी-भरी खेती नष्ट हो जाने की आशंका रहती है। ऐसी भील समुदाय की मान्यता है। भारत में कहीं भी ऐसा लोकनाट्य नहीं मिलेगा, जो इतनी लंबी अवधी तक पात्रों के इतने बड़े समूह के साथ विविध गांवों में इतने सुव्यवस्थित ढंग से सूर्योदय से सूर्यास्त तक प्रदर्शित किया जाता है।

इस नृत्य नाटिका में प्रमुख नायक बूड़िया है, जिसे शिव का प्रतिक माना जाता है। इसके बदन पर भगवा साफा बंधा होता है। कमर में बड़े-बड़े घुंघरू बंधे रहते हैं। बूड़िया अपने मुंह पर भयानक मुखौटा बांधे रहता है। इसके हाथ में लकड़ी की बनी तलवार होती है। यह प्रत्येक स्वांग के पहले और अंत में दूसरे कलाकारों के विपरीत दिशा में नृत्य करता है। बूड़िये के साथ दो 'रायां' होती है, जिनमें अलौकिक शक्तियों का प्रवेश रहता है। वे मुंह को इस प्रकार बांधे रहती है कि केवल आंखें ही दिखाई पड़ती हैं। दो भोपे होते हैं, जिनके गले में देवताओं के प्रतीक चिन्ह बंधे रहते हैं। ये हाथ में मोर-पंख, लोह-जंजीर आदि रखकर देवताओं से नृत्य परिसर में उपस्थित रहने के लिए प्रार्थना करते हैं।

गांव का कोई मैदान, चौराया अथवा खुला आंगन ही गवरी का रंगमंच होता है। जहां-जहां गवरी वाले गांव की बहिन-बेटियां ब्याही हुई होती हैं, वहां-वहां इसके प्रदर्शन आयोजित किए जाते हैं। गवरी में चार प्रकार के पात्र होते हैं, जिनमें देवपात्र, मानव पात्र, दानव पात्र एवं पशु पात्र होते हैं। देवपात्र सभी प्रकार के विकारों से रहित आदर्श के प्रतीक एवं कालजयी होते हैं। कालका, शिव- पार्वती देव पात्र के रूप में उपस्थित होते हैं। गवरी में मानव पात्रों की बहुलता होती है, जिनमें कंजर, नट, भोपा, संकरिया, बूड़िया, खेतूड़ी, देवर, भोजाई, बादशाह, बणियां, कानुगुजरी, कृष्ण आदि होते हैं। डाकण, भंवरा, हठिया, भियांवड़ तथा खड़ल्या भूत गवरी के दानव-पात्र हैं, इनका रूप भयानक होता है। सूअर, रीछ तथा शेर पशु पात्र होते हैं। गवरी में कभी पुरुष पात्र अपना शौर्य दिखाते हैं तो कभी अशुद्ध एवं असत् वृत्तियों के दानव पात्र सृष्टि को अपने मनोनुकूल संचालित करने का प्रयत्न करने हैं एवं सृष्टि पर कब्जा करना चाहते हैं। गवरी में ये पात्र धाड़-फाड़ करते हुए दिखाई देते हैं, लेकिन अंत में कालचक्र ऐसा आता है कि सभी नष्ट हो जाते हैं और देवसत्ता स्थापित हो जाती है।

गवरी धारण के पीछे मात्र मनोरंजन का उद्देश्य ही नहीं रहा और न ही आजीविका उपार्जन की भावना ही दृष्टिगोचर होती है। इसका मुख्य उद्देश्य भीलों द्वारा अपने धार्मिक कर्तव्य की संपूर्ति तथा बाबा शिव को रिझाकर गांव की खुशहाली, जाति की सुरक्षा एवम् रोग-शोक, दुःख-दारिद्र तथा दुर्भिक्ष से छुटकारा पाने का रहा है। गवरी में नृत्य की भी प्रधानता पाई जाती है। पात्रों में होने वाले संवाद बड़े नाटकीय एवं मनोरंजक होते हैं। नृत्य के अलावा इसका गीत पक्ष भी बड़ा प्रबल होता है। कलाकारों की पोशाकें बड़ी कलात्मक सज्जा लिए पात्रों की भूमिका के अनुरूप होती है। इन्हें धारण कर पात्र अपने को साधारण व्यक्ति से अलग अनुभव करता है और सफलता के साथ अपनी भूमिका का निर्वाह करता है। गवरी में स्त्रियों की भूमिका भी पुरुष ही अदा करते हैं। यह सच है कि लोककलाएं प्रदर्शन के बिना जिंदा नहीं रह सकती और प्रदर्शन से उनकी कलाएं संवरती-निखरती हैं, लेकिन इन कलाओं को सीख-समझकर उन्हें संरक्षण देने वालों को संरक्षण कहा है? हमें स्वयं व आने वाली पीढ़ी को लोक कलाओं से जोड़कर हर संभव हमारी महान विरासत को संरक्षित करना होगा। सरकारी स्तर पर भी इस दिशा में व्यापक प्रयास होने चाहिए।

राजकुमार जैन राजन